कवि कालिदासने भी इन प्राचीनताबद्ध-बुद्धियोंको परप्रत्ययननेयबुद्धि कहा है। वे परीक्षकमतिकी सराहना करते हुए लिखते हैं—

"पुराणमित्येव न साधु सर्वं न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम्।
सन्तः परीक्ष्यान्यतरद् भजन्ते मूढः परप्रत्ययनेयबुद्धिः॥"

अर्थात् सभी पुराना अच्छा और सभी नया बुरा नहीं हो सकता। समझदार परीक्षा करके उनमेंसे समीचीनको ग्रहण करते हैं। मूढ़ ही दूसरेके बहकावेमें आता है।

अतः इस प्राचीनताके मोह और नवीनताके अनादरको छोड़कर समीचीनताकी ओर दृष्टि रखनी चाहिए, तभी हम नूतन पीढ़ीकी मतिको समीचीन बना सकेंगे। इस प्राचीनताके मोहने असंख्य अन्धविश्वासों, कुरूढ़ियों, निरर्थक परम्पराओं और अनर्थक कुलाम्नायोंको जन्म देकर मानवकी सहज बुद्धिको अनन्तभ्रमोंमें उलझा दिया है। अतः इसका सम्यग्दर्शनकर जीवनको समीक्षापूर्ण बनाना चाहिये।

●

जैन अनुसंधानका दृष्टिकोण

यह एक सिद्ध बात है कि साहित्य अपने युगका प्रतिबिम्ब होता है। उसके निर्माताओंका एक अपना दृष्टिकोण रहनेपर भी साहित्यको तत्कालीन सामयिक समानतन्त्रीय या प्रतितन्त्रीय साहित्यके प्रभावसे अछूता नहीं रखा जा सकता। युद्ध क्षेत्रकी तरह दार्शनिक साहित्यका क्षेत्र तात्कालिक सन्धियोंके अनुसार मित्रपक्ष और शत्रुपक्षमें विभाजित होता रहता है। जैसे ईश्वरवादके खण्डनमें जैन, बौद्ध और मीमांसक मिलकर काम करते हैं यद्यपि उन सबके अपने दृष्टिकोण जुदा-जुदा हैं पर वेदके अपौरुषेयत्वके विचारमें मीमांसक विरोध पक्षमें खड़ा हो जाता है और जैन, बौद्ध साथ चलते हैं। क्षणिकत्वके खण्डनके प्रसंगमें जैन और बौद्ध दोनों परस्पर विरोधी बनते हैं और मीमांसक जैनका साथ देता है। तात्पर्य यह कि किसी भी सम्प्रदायके साहित्यमें विभिन्न तत्कालीन साहित्योंका विरोध या अविरोध रूपमें प्रतिबिम्ब अवश्यंभावी है। अतः किसी भी साहित्यका संशोधन करते समय तत्कालीन सभी साहित्यका अध्ययन नितान्त अपेक्षणीय है। बिना इसके वह संशोधन एकदेशीय होगा।

अनेक आचार्योंने तत्कालीन परिस्थितियोंके कारण, जैन संस्कृतिके पीछे जो मूल विचारधारा है उसे भी गौण कर दिया है और वे प्रवाह पतित हो गये हैं। ऐसे तथ्योंका पता लगानेके लिए प्रत्येक विचार विकासका परीक्षण हमें ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दोनों दृष्टिकोणोंसे करना होगा। जैन विचारधाराका मूल रूप क्या था और किन-किन परिस्थितियोंसे उसमें क्या-क्या परिवर्तन आये इसके लिए बौद्ध पिटक और वैदिक ग्रन्थोंका गम्भीर आलोड़न किए बिना हम सत्य स्थितिके पास नहीं पहुँच सकते।

अवान्तर सम्प्रदायोंके अभेद मुद्दोंकी विकास परम्परा और उनके उद्भवके कारणोंपर प्रकाश भी इसी प्रकारके बहुमुखी अध्ययनसे संभव हो सकता है। यद्यपि इस प्रकारके अध्ययनके आलोकमें अनेक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकारके पूर्वग्रहरूपी अन्धकार स्थलोंका भेदन होनेसे कुछ ऐसा लगेगा कि हमारा सब कुछ गया, पर उससे चित्र हल्का ही होगा और संशोधनका क्षेत्र मात्र विद्या और विचारकी पुनीत ज्योतिसे मानवताके विकासमें सहायक होगा।

संशोधनके क्षेत्रमें हमें पूर्वग्रहोंसे मुक्त होकर जो भी विरोध या अविरोध दृष्टिगोचर हों उन्हें प्रामाणिकताके साथ विचारक जगत्के सामने रखना चाहिए। किसी संदिग्ध स्थलका खींचकर किसी पक्ष विशेष के साथ मेल बैठानेकी वृत्ति संशोधनके दायरेको संकुचित कर देती है। संशोधनके पवित्र विचारपूत स्थानपर बैठकर हमें उन सभी साधनोंकी प्रामाणिकताकी जाँच कठोरतासे करनी होगी जिनके आधारसे हम किसी सत्य तक पहुँचना चाहते हैं। पट्टावली, शिलालेख, दानपत्र, ताम्रपत्र, ग्रन्थोंके उल्लेख आदि सभी साधनोंपर संशोधक पहिले विचार करेगा। कपड़ा नापनेके पहिले गजको नाप लेना बुद्धिमानोंकी बात है।

जैन संस्कृतिका पर्यवसान चारित्रमें है। विचार तो वहीं तक उपयोगी हैं जहाँ तक वे चारित्रका पोषण और उसे भाव प्रधान रखनेमें सहायक होते हैं। चारित्र अर्थात् ऐसी आचार परम्परा जो प्राणिमात्रमें समता और वीतरागताका वातावरण बनाकर अहिंसाकी मौलिक प्रतिष्ठा कर सके। व्यक्तिको निराकुलता और अहिंसक समाज रचनाके द्वारा विश्व शान्तिकी ओर बढ़ावे। इस सांस्कृतिक दृष्टिकोणसे हमें अपने अवान्तर सम्प्रदायोंकी अब तककी धाराओंको जाँचना-परखना होगा और आदर्शकी जगह उन मूल विचारों को देनी होगी जो निर्ग्रन्थ परम्परा की रीढ हैं। भले ही उनका व्यवहार मनुष्यके जीवनमें अंशतः ही हो, पर आदर्श तो अपनी ऊँचाईके कारण आदर्श ही होगा। व्यवहार उसकी दिशामें होकर अपनेमें सफल है। इस मूल सांस्कृतिक दृष्टिकोणकी रक्षा किस समय कहाँ तक हुई, इस छानबीनका कार्य बड़ी जवाबदारी का है। जैन संशोधन तभी सार्थक सिद्ध हो सकता है जब वह अपनी सांस्कृतिक भूमिपर बैठकर विचार ज्योति को जलाये। हमें अपने साहित्यमेंसे उन शिथिल अंशोंको सामने लाना ही होगा जिनने इस पवित्र दृष्टिकोण को धुँधला किया है और उनके कारणोंपर सयुक्ति प्रकाश भी डालना ही होगा। जैन संशोधन संस्थाएँ तभी अपनी सांस्कृतिक चेतनाको जगानेकी दिशामें अग्रसर बन सकती हैं।

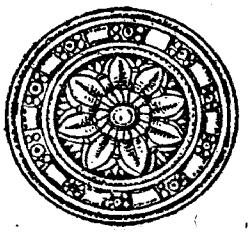

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org